International Journal of Sanskrit Research 2023; 9(2): 11-12

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2023; 9(2): 11-12
© 2023 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 15-12-2022
Accepted: 19-01-2023

तानिया डसगोत्रा
शोधच्छात्रा पी.एच.डी संस्कृत विभाग
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू और
कश्मीर, भारत

Corresponding Author:
तानिया डसगोत्रा
शोधच्छात्रा पी.एच.डी संस्कृत विभाग
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू और
कश्मीर, भारत

वल्लभाचार्य के मत में ब्रह्मस्वरूप विमर्श

तानिया डसगोत्रा

सारांश
वल्लभाचार्य के मत में ब्रह्म स्वरूप क्या है? इस विषय को प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में वर्णित किया गया है। इनके मत में जीव और ब्रह्म भिन्न–भिन्न नहीं अपितु जीव ब्रह्म का ही अंश मात्र है। इनके अनुसार माया के सम्बन्ध से रहित होने के कारण यह ब्रह्म शुद्ध है। इसी कारण इन्हें शुद्धाद्वैती कहा गया है। कहने का अभिप्राय यह है कि जब तक माया का ज्ञान है तब तक शुद्ध ब्रह्म को नहीं जाना जा सकता।

कूटशब्दः वल्लभाचार्य, मत, ब्रह्मस्वरूप विमर्श

प्रस्तावना
वेदान्त में विभिन्न सम्प्रदाय है जिनमें वल्लभाचार्य जी शुद्धाद्वैतवाद नामक सम्प्रदाय के प्रवर्तक है। इनका जन्म 1481 में वैशाख कृष्ण एकादशी के दिन छत्तीसगढ़ के चंपारण्य में हुआ था। इनके पिता का नाम लक्ष्मण भट्ट तथा माता का नाम इल्लमा गारू था। यह पुष्टिमार्ग के तथा सगुणधारा की कृष्णभक्ति शाखा के आधारस्तम्भ माने जाते हैं ऐसा कहा जाता है कि वल्लभाचार्य ने अपना दर्शन खुद गढ़ा, किन्तु मूल सूत्र वेदान्त में ही प्राप्त होते है। 52 वर्ष की आयु में सन् 1533 को काशी हनुमान घाट पर गंगा में प्रविष्ट होकर उन्होंने जल–समाधि ले ली।
महर्षि बादरायण रचित ब्रह्मसूत्र सभी वेदान्त सम्प्रदायों का उत्स है। शंकराचार्य जी कहते हैं कि आत्मविद्या या वेदान्त ही सभी शास्त्रों का प्रयोजन है। ब्रह्मसूत्र में आये हुए तथ्यों को विविध भाष्यकारों ने अपनी–अपनी चिन्तन परम्परा से लोकजीवन के समक्ष प्रस्तुत किया है।
गोस्वामी गिरधर के अनुसार मायासम्बंधरहित शुद्ध तत्त्व ही शुद्ध कहा गया है अर्थात् जो माया के सम्बंध से रहित है वही शुद्ध कहलाता है ऐसा उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक शुद्धाद्वैतमार्तण्ड में लिखा है शुद्ध ब्रह्म ही कारण–कार्य रूप में अभिव्यक्त होता है[1] किन्तु उसका सम्बंध माया से नहीं है।
श्री वल्लभाचार्य को वेद शास्त्रों में पूर्ण निष्ठा है विशेषतः श्रीमद भागवत और भगवतगीता में! इसलिए इन्हें वैष्णव संप्रदाय कहा जाता है उनके अनुसार केवल वेदों से ही ईश्वर के अस्तित्व और स्वरूप का ज्ञान हो सकता है। उस ब्रह्म को हम केवल अनुमान और तर्क से नहीं जान सकते है। आचार्य वल्लभ का ब्रह्म अनन्त गुणों का धारक, रचयिता और नियंत्रक है।[2] रामानुज के समान वल्लभ ने यह स्वीकार किया है कि वे उपनिषद जो ब्रह्म को निर्गुण कहते है उनका तात्पर्य उस ब्रह्म को संपूर्ण गुणों से रहित करना नहीं है बल्कि प्रकृति या साधारण गुणों को बाधित करना है।[3] वस्तुतः वल्लभ की ब्रह्म विषयक धारणा शंकर के ईश्वर से मिलती जुलती है। किन्तु उन्होंने शंकर के समान सगुण और निर्गुण की कल्पना नहीं की है। उनके विचार से ब्रह्म केवल एक ही है और उसे ही विश्व को नियंत्रित करने की अकल्पनीय शक्ति प्राप्त है। सभी वस्तुएं उसी पर आश्रित है वह किसी पर आश्रित नहीं है। वल्लभ के अनुसार ब्रह्म के अनेक नाम है जैसे– परमात्मा, भगवान, ईश्वर आदि। वह श्रीकृष्ण को ही श्रेष्ठ देवता या स्वयं ब्रह्म मानते है।[4]
ब्रह्म या ईश्वर इस संसार का समवायी और निमित्त दोनों कारण है ऐसा मध्वाचार्य का कहना है।[5] ब्रह्म अपनी स्वतंत्र इच्छा से ही सब कार्य करता है वह किसी की सहायता नहीं लेता। ब्रह्म की दो शक्तियां है आविर्भाव और तिरोभाव, उन्हीं से वह संसार की उत्पत्ति और विनाश करता है।[6] वल्लभ के अनुसार माया से संसार की रचना नहीं होती, माया तो ईश्वर की एक शक्ति मात्र है। इसी शक्ति से वह अनेक रूपों में प्रकट होता है। उनके मतानुसार यदि हम संसार की उत्पत्ति माया से मानते है तो इसका तात्पर्य यह है कि हम ब्रह्म के अतिरिक्त एक और तत्त्व को स्वीकार कर रहे है यदि हम ऐसा करते है तो इससे शास्त्रों में प्रतिपादित अद्वैत का खण्डन होता है।[7]

सांख्यदर्शन से वल्लभ और उके अनुयायी सहमत नहीं है क्योंकि उनके अनुसार स्वतन्त्र रूप से जड़ प्रकृति संसार की रचना नहीं कर सकती है। वल्लभ माया को एक शाश्वत सत्ता स्वीकार करते है परन्तु वह ब्रह्म का ही एक अंश मात्र है।[8] कहने का तात्पर्य यह है कि इस संसार में ऐसी कोई वस्तु नहीं है जिसका अस्तित्त्व ब्रह्म के बिना हो। अतः ब्रह्म के द्वारा ही संसार की सभी वस्तुओं की सत्ता स्वीकार करनी चाहिए। क्योंकि ब्रह्म संसार में निहित है और यह समस्त संसार उस ब्रह्म में ही निहित है। वह अपरिवर्तनीय है अर्थात् वह कभी भी परिवर्तित नहीं होता, और साथ–साथ परिवर्तनीय, कूटस्थ और गतिवान भी है।[9] जिस प्रकार मुण्डक उपनिषद में कहा गया है कि नित्य ब्रह्म ही हमारे सामने प्रकट होता है उसी प्रकार वल्लभ का भी यही कहना है कि वह नित्य ब्रह्म ही हमारे आगे–पीछे, दाएं–बाएं और ऊपर नीचे फैला हुआ है। कहने का अभिप्राय यह है कि यह समग्र संसार ही ब्रह्म है। यह सिद्धान्त सत्तामीमांसीय अद्वैतवाद है इसलिए इसे शुद्धाद्वैतवाद कहा जाता है और इसे ही शुद्ध ब्रह्मवाद भी कह सकते है। यह ब्रह्म केवल पृथ्वी और चन्द्रमा आदि को ही नियंत्रित नहीं करता बल्कि वह सभी जीवों के कर्मों को भी नियंत्रित करता है। साथ ही वह ईर्ष्या आदि विकारों और पक्षपात से भी पूर्णतः मुक्त है।[10]

यद्यपि शंकर का ब्रह्म न कर्त्ता है और न ही भोक्ता, किन्तु वल्लभ का ब्रह्म कर्त्ता और भोक्ता दोनों है।[11] फिर भी उस ब्रह्म की मूल प्रकृति सत्, चित् और आनन्दमय है जो अपनी पूर्णता के साथ सदा उसमें विद्यमान रहती है।[12] आचार्य वल्लभ के अनुसार जीव शाश्वत अर्थात् सत्य है और वह अणु आकार का है।[13] ब्रह्म के साथ उनका सम्बंध अंश और अंशी[15] या अग्नि और स्फुलिंग जैसा है।[14] उनका कहना है कि जीव को संसार से मुक्त होने के लिए भक्ति को अपनाना चाहिए, क्योंकि यही एक प्रभावशाली साधन है कहने का तात्पर्य यह है कि भक्ति से ही मुक्ति मिल सकती है और भक्ति का अर्थ है भगवान की महिमा का ज्ञान और उनके प्रति प्रेम भाव।[16] रामानुज के अनुसार भक्ति ध्रुव स्मृति है किन्तु वल्लभ के मत में भक्ति का अर्थ – भगवान के प्रति अतिशय राग या प्रेम है और वह उसे कर्म और ज्ञान दोनों से भिन्न समझते है। जो भगवान का सच्चा भक्त होता है वह सबको भगवान में और भगवान को सभी में देखता है।[17] वह सदैव भगवत्–भक्ति के नशे में मग्न रहता है भक्ति शब्द 'भज' और 'क्ति' के संयोग से बना है जिसका अर्थ है प्रेम या सेवा करना। इन दोनों के होने पर ही भक्ति कहलाती है। बिना सेवा के प्रेम और बिना प्रेम के सेवा पाखण्ड मात्र दिखाई देती है। यह भक्ति उसी को प्राप्त होती है जिस पर भगवान का अनुग्रह होता है। आचार्य वल्लभ के मतानुसार वेदों के अलौकिक अर्थ को भी भगवान की कृपा से ही जाना जा सकता है।[18] तात्पर्य यह है कि वेदों के अर्थो को जानना सरल नहीं है उन अर्थों को केवल वही जान सकता है जिस पर भगवान की कृपा हो।

वल्लभाचार्य के शुद्धाद्वैत में भगवान की कृपा का बड़ा महत्त्व है यही कारण है कि इसे पुष्टिमार्ग या भगवत–कृपा का मार्ग कहा गया है। भगवान की कृपा के लिए श्रीमद्भागवत में दो शब्द प्रयुक्त हुए है पुष्टि और पोषण।[19] यह मार्ग मर्यादा मार्ग से भिन्न है। मर्यादा–मार्ग से तात्पर्य है कि ''जैसा करोगे वैसा भरोगे''। इस सिद्धान्त के अनुसार किसी विशेष फल की प्राप्ति के लिए हमे तीन सीढ़ियों से गुजरना होगा। वह है – कर्म, प्रयत्न और कामना। फल प्राप्त करने के लिए कर्म करना होगा, कर्म करने के लिए प्रयत्न की आवश्यकता होगी और प्रयत्न कामना से होता है।[20] अतः जो मनुष्य मुक्ति चाहता है उसके लिए कामना, प्रयत्न और कर्म करना आवश्यक है किन्तु इस मर्यादा मार्ग के विरुद्ध पुष्टिमार्ग का अनुसरण करने वाले अर्थात् उनके पीछे चलने वाले भगवत कृपा का आधार ग्रहण करते है।[21] उन्हें किसी ज्ञान, कर्म या प्रयत्न की आवश्यकता नहीं है।[22] उन्हें केवल भगवान को समर्पित होना होगा और साथ ही सांसारिक सुखों की इच्छा त्यागनी पड़ेगी।[23] कहने का तात्पर्य यह है कि मुक्ति प्राप्त करने के लिए स्वयं को भगवान को समर्पित करना होगा और यह तभी संभव है जब हम सांसारिक सुखों की इच्छा का परित्याग करेंगे।

वल्लभ ने भगवन कृष्ण की भक्ति पर विशेष बल दिया है उन्होंने कृष्ण के अनुग्रह को ही पुष्टि कहा है। न्याय–वैशेषिक दर्शन के मत को वल्लभ और उनके अनुयायी स्वीकार नहीं करते, जिसमें यह कहा गया है कि कार्य–कारण और अंश–अंशी के बीच समवाय सम्बंध माना जाता है। इनके विचार से उनमें तादात्म्य का सम्बन्ध है कहने का अभिप्राय यह है कि वह एक–दूसरे में तल्लीन होते है। इनके अनुसार संसार ब्रह्म का कार्य है जिस प्रकार कारण कार्य से पूर्व में रहता है उसी प्रकार ब्रह्म संसार की उत्पत्ति से पहले विद्यमान था। जैसे– सोने के बने हुए आभूषण सोना ही होते है ठीक उसी प्रकार से संसार में विद्यमान सभी पदार्थ ब्रह्म ही है।[24]

निष्कर्ष रूप से हम यह कह सकते है कि माया से रहित ब्रह्म ही शुद्ध है इसलिए इसे शुद्धाद्वैतवाद कहा गया है। वल्लभ के अनुसार समस्त जगत ही ब्रह्म है। उन्होंने श्रीकृष्ण की भक्ति पर विशेष बल दिया है। उनके अनुसार भक्ति से ही मुक्ति मिल सकती है ज्ञान से नहीं। वह कहते है कि ईश्वर और जीवन में कोई अन्तर नहीं है। जीव ब्रह्म का ही अंश है। जैसे शंकराचार्य के अनुसार –

'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्नैव नापरः'।।[25]

संदर्भ सूची

1. शुद्धाद्वैतमार्तण्ड, पृ॰ 24
2. तुलना कीजिए, भागवत, 11.4.2
3. ब्रह्मसूत्र वल्लभ भाष्य 3.2.22
4. सिद्धान्तमुक्तावली, 3
5. ब्रह्मसूत्र 1.1.2 और सूत्र 'तत्तु समन्वयात' पर भष्य
6. शुद्धाद्वैतमार्तण्ड, पृ. 8.23
7. ब्रह्मसूत्र पर भाष्य 1.1.6
8. पुरूषोतम भाष्य, पृ 86
9. वल्लभ का तत्त्वार्थदीप और उस पर भाष्य, पृ. 115
10. ब्रह्मसूत्र (2.1.3.4) पर वल्लभ भाष्य
11. ब्रह्मसूत्र (1.1.1)
12. ब्रह्मसूत्र (1.1.1) पर भाष्य और सिद्धान्तमुक्तावली 3
13. ब्रह्मसूत्र पर भाष्य 2.3.11
14. ब्रह्मसूत्र, 2.3.43
15. शुद्धाद्वैतमार्तण्ड, पृ. 7, मुण्डक उपनिषद 2.1.1 के तुलना कीजिये।
16. तत्त्वार्यदपि, पृ. 65
17. भागवत्, 11.2.45
18. अणु भाष्य, पृ. 23
19. भागवत, 11.10.4
20. अणु भाष्य, 2.3.42
21. अणु भाष्य, 4.4.9
22. अणु भाष्य, 3.3.29
23. श्री हरिराय का प्रमेयरत्नार्णव
24. तुलना कीजिये भागवत 21. 28. 19
25. क) विवेकचूडामणि
    ख) ब्रह्मज्ञानावली माला, श्लोक –20
    ग) श्री भागवतानंद गुरू–श्रीनिग्रहाचार्य कृता–धुरन्धरसंहिता। द्वितीय पटल, श्लोक 33